International Journal for Research Technology and Seminar
ISSN: 2347-6117 (Print) | ISSN: 3048-703X (Online)
International | Peer-reviewed | Refereed | Indexed Journal
Volume 28 | Issue 03 | Jan-Jun 2025

आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का सृजन संसारः सुशीला सामद से जसिंता केरकेट्टा तक

महारानी रांखोल*

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग

सरकारी महाविद्यालय खुमुलवंग, त्रिपुरा, भारत

Email ID: maharanihrangkhawl@gmail.com

Accepted: 10.03.2025 **Published**: 21.03.2025

मुख्य शब्दः आदिवासी साहित्य, हिंदी कवयित्रियाँ, सुशीला सामद, जसिंता केरकेट्टा, सांस्कृतिक अस्मिता।

शोध आलेख सार

आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का सृजन संसार न केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति का माध्यम है, बल्कि यह आदिवासी जीवन के संघर्षों, सांस्कृतिक अस्मिता, और सामाजिक चेतना का दस्तावेज भी प्रस्तुत करता है। सुशीला सामद से जसिंता केरकेट्टा तक, विभिन्न कालखंडों में आदिवासी कवयित्रियों ने अपने काव्य में व्यक्तिगत और सामूहिक अनुभवों को समाहित किया है। उनके साहित्य में आदिवासी समाज के मूल्यों, परंपराओं, प्रकृति से उनके गहरे संबंध, पितृसत्ता के प्रतिरोध और औपनिवेशिक तथा उत्तर–औपनिवेशिक शोषण के खिलाफ मुखर स्वर देखने को मिलते हैं। यह लेख आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की कविताओं का गहन अध्ययन करता है, जिसमें उनकी भाषा, शैली, भावनात्मक गहराई और विषयवस्तु का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। इस अध्ययन में साहित्य समीक्षा, तुलनात्मक अध्ययन और पाठ विश्लेषण जैसी पद्धतियों का उपयोग किया गया है ताकि आदिवासी हिंदी साहित्य की समृद्ध परंपरा को बेहतर ढंग से समझा जा सके। साथ ही, यह लेख आदिवासी स्त्रीवाद, जल–जंगल–जमीन से जुडी चेतना, लोक परंपराओं तथा आधुनिकता के अंतर्विरोधों पर भी प्रकाश डालता है। शोध का उद्देश्य आदिवासी हिंदी साहित्य को मुख्यधारा के साहित्यिक विमर्श में उचित स्थान देना और इसकी व्यापकता तथा प्रभाव को रेखांकित करना है।

A Venture of IJRTS Takshila Foundation

पहचान निशान

International Journal for Research Technology and Seminar
ISSN: 2347-6117 (Print) | ISSN: 3048-703X (Online)
International | Peer-reviewed | Refereed | Indexed Journal
Volume 28 | Issue 03 | Jan-Jun 2025

*Corresponding Author

© *International Journal for Research Technology and Seminar*, महारानी रांखोल, *All Rights Reserved.*

1. परिचय

आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का सृजन संसार भारतीय साहित्य का एक अनूठा और महत्वपूर्ण अध्याय है, जो न केवल आदिवासी समाज की ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना को प्रतिबिंबित करता है, बल्कि उनकी अस्मिता, संघर्ष, लोकपरंपराएँ और सामूहिक चेतना को भी स्वर प्रदान करता है। भारतीय साहित्य में आदिवासी लेखन की अपनी एक स्वतंत्र पहचान है, और आदिवासी महिलाओं का योगदान इस परंपरा को और भी समृद्ध बनाता है। आदिवासी कवयित्रियों का साहित्यिक संसार मुख्यधारा के साहित्य से भिन्न एक ऐसी वैकल्पिक धारा प्रस्तुत करता है, जो हाशिए पर पडे समुदायों की वास्तविकताओं को सामने लाने के साथ–साथ साहित्य की पारंपरिक परिभाषाओं को भी चुनौती देता है। आदिवासी महिलाओं की कविता महज रचनात्मक अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह उनके समाज, परंपराओं, संघर्षों, विस्थापन, पर्यावरणीय विनाश, स्त्री अधिकारों और सामाजिक अन्याय की मुखर अभिव्यक्ति भी है। आदिवासी कवयित्रियों की रचनाएँ मुख्यतः प्रकृति के साथ उनके गहरे संबंध, सामाजिक बहिष्करण के विरुद्ध प्रतिरोध, औपनिवेशिक और नव–औपनिवेशिक शोषण के खिलाफ संघर्ष, तथा भाषा और संस्कृति की रक्षा जैसे विषयों पर केंद्रित होती हैं। आदिवासी समुदायों की प्रमुख समस्याएँ जंगलों और जमीन से बेदखली, औद्योगीकरण और शहरीकरण की मार, परंपरागत जीवनशैली और संस्कृति पर खतरा, तथा पितृसत्तात्मक समाज में महिलाओं की दोहरी पीडाकृइन कविताओं के केंद्रीय विषय रहते हैं। आदिवासी साहित्य की परंपरा प्राचीन मौखिक साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य तक फैली हुई है। इस परंपरा में लोककथाएँ, गीत, मिथक, कहावतें और किस्से शामिल हैं, जो समाज की सामूहिक चेतना को व्यक्त करते हैं। हिंदी साहित्य में आदिवासी महिलाओं की रचनात्मक भागीदारी धीरे–धीरे बढी है। यदि हम आदिवासी हिंदी कवयित्रियों के सृजन संसार की यात्रा को देखें, तो इसकी शुरुआत सुशीला सामद से होती है, जो आदिवासी हिंदी साहित्य की पहली महिला कवयित्री मानी जाती हैं। उन्होंने अपने काव्य और गद्य लेखन के माध्यम से आदिवासी समाज की आवाज को हिंदी साहित्य में एक सशक्त स्थान दिलाने का प्रयास किया।

आधुनिक दौर में जसिंता केरकेट्टा जैसी कवयित्रियों ने इस परंपरा को और आगे बढाया है। जसिंता केरकेट्टा की कविताएँ आदिवासी जीवन के संघर्षों, विस्थापन, सांस्कृतिक संकट, पर्यावरणीय असंतुलन और स्त्री अधिकारों के मुद्दों पर केंद्रित हैं। उनकी कविताओं में आदिवासी समाज की व्यथा, प्रतिरोध और पुनरुत्थान का स्वर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। वे अपनी कविताओं के माध्यम से यह संदेश देती हैं कि आदिवासी समाज का साहित्य केवल एक सांस्कृतिक विरासत नहीं है, बल्कि यह एक जीवंत परंपरा है, जो निरंतर बदलते समय के साथ अपने नए आयामों को विकसित कर रही है। आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की

रचनाओं में स्त्रीवादी चेतना का भी एक विशेष स्थान है। हालांकि यह चेतना पारंपरिक शहरी स्त्रीवाद से भिन्न होती है, क्योंकि यह मुख्यतः आदिवासी समाज की सांस्कृतिक विशिष्टताओं और पारंपरिक जीवनशैली से जुडी हुई होती है। आदिवासी स्त्रियाँ दोहरे शोषण का सामना करती हैंकृएक ओर वे जातीय और वर्गीय उत्पीडन से जूझती हैं, और दूसरी ओर वे पितृसत्ता की जकडबंदी का भी सामना करती हैं। उनकी कविताएँ न केवल स्त्री जीवन के संघर्षों को दर्शाती हैं, बल्कि वे आदिवासी समाज के भीतर स्त्रियों की भूमिका को भी उजागर करती हैं। आदिवासी स्त्री–कविता में मातृत्व, प्रेम, संघर्ष, प्रकृति, लोक परंपराएँ और विद्रोह जैसे विभिन्न विषय आते हैं। जसिंता केरकेट्टा की कविताएँ इस संदर्भ में विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे स्त्री–विमर्श को आदिवासी परंपरा और अनुभवों से जोडकर एक नए विमर्श की स्थापना करती हैं। वे उन संरचनाओं को चुनौती देती हैं, जो आदिवासी समाज की महिलाओं की आवाज को दबाने का प्रयास करती हैं। उनकी कविताओं में प्रतिरोध की शक्ति दिखाई देती है, जो आदिवासी महिलाओं की चेतना और उनकी सामूहिक संघर्षशीलता को प्रतिबिंबित करती है। आदिवासी कविता में प्रकृति केवल पृष्ठभूमि नहीं है, बल्कि यह कविता का एक केंद्रीय पात्र बनकर उभरती है। आदिवासी समाज का जीवन प्रकृति से गहरे रूप से जुडा हुआ है, और यही कारण है कि आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की रचनाओं में जंगल, नदी, पहाड, पशु–पक्षी और पर्यावरण की सुरक्षा का विषय प्रमुखता से आता है। यह साहित्य हमें बताता है कि किस प्रकार आदिवासी समाज ने सदियों से प्रकृति के साथ सह–अस्तित्व की परंपरा को बनाए रखा है, लेकिन आधुनिक विकास के नाम पर यह संतुलन लगातार टूटता जा रहा है। आज के समय में जब जलवायु परिवर्तन, औद्योगीकरण और वनों की कटाई जैसी समस्याएँ गंभीर रूप ले रही हैं, तब आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की कविताएँ हमें इन मुद्दों पर पुनर्विचार करने को प्रेरित करती हैं। इन कविताओं के माध्यम से आदिवासी समाज न केवल अपनी पहचान की रक्षा करता है, बल्कि वह पर्यावरण–संरक्षण का एक महत्वपूर्ण संदेश भी देता है।

1.1पृष्ठभूमि

आदिवासी हिंदी साहित्य भारतीय साहित्य की एक महत्वपूर्ण लेकिन लंबे समय तक उपेक्षित विधा रही है। यह साहित्य न केवल आदिवासी समाज की संस्कृति, परंपराओं और जीवनशैली का प्रतिनिधित्व करता है, बल्कि उनके संघर्षों, विस्थापन, और सामाजिक–राजनीतिक हाशिए पर रखे जाने की स्थितियों को भी अभिव्यक्त करता है। आदिवासी साहित्य की जडें मौखिक परंपरा में गहरी पैठी हुई हैं, जहाँ गीत, गाथाएँ, लोककथाएँ और कहावतें आदिवासी समुदायों के जीवन का अभिन्न हिस्सा रही हैं। हालांकि, आधुनिक हिंदी साहित्य में आदिवासी लेखन विशेष रूप से 20वीं सदी के उत्तरार्ध में प्रमुखता से उभरकर सामने आया। आदिवासी समाज का साहित्यिक योगदान मुख्यधारा की साहित्यिक परंपरा से भिन्न रहा है। जबकि पारंपरिक हिंदी साहित्य में मुख्य रूप से ब्राह्मणवादी, शहरी और सवर्ण चेतना का प्रभाव देखा जाता है, वहीं आदिवासी साहित्य एक अलग सांस्कृतिक और सामाजिक अनुभव को व्यक्त करता है। भारतीय साहित्य में

आदिवासी साहित्य को 1980 और 1990 के दशक में अधिक पहचान मिली, जब दलित साहित्य की तरह आदिवासी लेखकों और कवियों ने भी अपने अनुभवों को केंद्र में रखते हुए लिखना शुरू किया। इस काल में हिंदी साहित्य में कई महत्वपूर्ण आदिवासी लेखक और कवयित्रियाँ उभरकर आईं, जिन्होंने न केवल आदिवासी जीवन की यथार्थवादी झलक दी, बल्कि समाज की विसंगतियों पर भी प्रश्न उठाए। आदिवासी साहित्य की परंपरा मौखिक साहित्य से लिखित साहित्य की ओर बढी, जहाँ लोकगीतों, मिथकों और जनश्रुतियों का संग्रहण और प्रकाशन किया जाने लगा। धीरे–धीरे, आदिवासी लेखक और कवयित्रियाँ मुख्यधारा के हिंदी साहित्य में अपनी पहचान बनाने लगे। सुशीला सामद को हिंदी की पहली आदिवासी कवयित्री माना जाता है, जिन्होंने आदिवासी समाज के भावनात्मक, सांस्कृतिक और सामाजिक पक्षों को अपनी रचनाओं में उकेरा। इसके बाद के दौर में जसिंता केरकेट्टा जैसी कवयित्रियों ने अपनी कविताओं में आदिवासी स्त्रियों के संघर्ष, विस्थापन और प्रतिरोध के स्वर को और अधिक प्रखरता दी। आदिवासी हिंदी कवयित्रियाँ अपनी रचनाओं के माध्यम से एक नई साहित्यिक चेतना को जन्म देती हैं, जिसमें आदिवासी स्त्रीवाद, सामाजिक न्याय, पर्यावरण चेतना और आत्मनिर्णय के मुद्दे प्रमुखता से आते हैं। ये कवयित्रियाँ आदिवासी समाज की पीडा को अपनी संवेदनशील अभिव्यक्ति के माध्यम से सामने लाती हैं, जिसमें उनकी संघर्षशीलता और जिजीविषा भी दिखाई देती है।

1.2आदिवासी साहित्य का विकास और उसका ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

आदिवासी साहित्य का उद्‌भव भारतीय समाज की मौखिक परंपराओं से जुडा हुआ है। यह साहित्य मुख्यतः मौखिक रूप में ही प्रचलित रहा है, जिसमें लोककथाएँ, लोकगीत, मिथक, किंवदंतियाँ, नृत्य, चित्रकला और अन्य पारंपरिक कला रूप शामिल हैं। यह साहित्य किसी एकल लेखक की रचना न होकर संपूर्ण समुदाय की स्मृतियों, अनुभवों और विश्वासों का संग्रहीत रूप होता है। भारत के विभिन्न आदिवासी समुदायों जैसे संथाल, गोंड, भील, मुण्डा, उरांव, हो, कोल, और अन्य जनजातियों ने अपनी सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित रखने के लिए साहित्य को एक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। आदिवासी समाज में साहित्य का मूल उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं बल्कि शिक्षण, इतिहास की सुरक्षा, सांस्कृतिक मूल्यों का संवर्धन और पीढयिों तक ज्ञान का संचार करना रहा है।

आदिवासी साहित्य की उत्पत्ति और मौखिक परंपरा

आदिवासी समाज में मौखिक परंपरा को विशेष महत्त्व दिया जाता है। आदिवासी साहित्य का एक बडा भाग लोककथाओं, गीतों और नृत्य के माध्यम से पीढी–दर–पीढी स्थानांतरित होता आया है। इस परंपरा में लोकगीतों और कथाओं के माध्यम से न केवल मनोरंजन किया जाता है बल्कि समुदाय की सामूहिक स्मृतियों, ऐतिहासिक घटनाओं, सामाजिक मूल्यों और प्रकृति के साथ उनके गहरे संबंधों को संरक्षित किया जाता है। उदाहरण के लिए, संथाल जनजाति की ष्सोहराय गीतष् परंपरा कृषि और प्रकृति से जुडे विषयों को अभिव्यक्त करती है, जबकि भील समुदाय की कथाएँ उनके ऐतिहासिक संघर्षों और वीरता की कहानियाँ

बयां करती हैं। चूँकि आदिवासी भाषाएँ लंबे समय तक लिखित रूप में संरक्षित नहीं की गईं, इसलिए इनकी साहित्यिक अभिव्यक्ति मौखिक रही। किंतु 20वीं शताब्दी में जब आदिवासी समुदायों में औपचारिक शिक्षा और साक्षरता बढी, तब उनके मौखिक साहित्य को लिपिबद्ध करने का कार्य भी शुरू हुआ। इसके परिणामस्वरूप, अनेक लोकगाथाएँ, मिथक और पारंपरिक कहानियाँ लिखित रूप में उपलब्ध होने लगीं, जिससे आदिवासी साहित्य की एक नई दिशा विकसित हुई।

हिंदी साहित्य में आदिवासी लेखन का स्थान

हिंदी साहित्य में आदिवासी साहित्य को विशेष स्थान देने की प्रक्रिया अपेक्षाकृत हाल ही में प्रारंभ हुई है। लंबे समय तक मुख्यधारा के साहित्य में आदिवासी जीवन और संस्कृति को बाहरी दृष्टि से देखा और चित्रित किया जाता रहा। आदिवासी समुदायों को साहित्य में या तो श्वनवासीश, श्अनपढश, श्पिछडेश के रूप में दर्शाया गया या फिर उन्हें श्रहस्यमयश और श्अलग–थलगश जीवन जीने वाली जनजातियाँ मानकर चित्रित किया गया। हालाँकि, समय के साथ आदिवासी समाज के भीतर से ही लेखन की एक स्वतंत्र धारा विकसित हुई, जिसमें उन्होंने अपनी पहचान, संघर्ष, संस्कृति और जीवनशैली को स्वयं के दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया। आधुनिक हिंदी साहित्य में आदिवासी लेखकों और कवयित्रियों ने अपनी सशक्त पहचान बनाई है। उन्होंने अपनी रचनाओं में आदिवासी समाज की वास्तविकताओं को अभिव्यक्त किया, जिनमें उनकी सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक चुनौतियों का उल्लेख प्रमुखता से मिलता है। यह साहित्य केवल श्पीडतिश आदिवासी समुदाय को चित्रित करने तक सीमित नहीं है, बल्कि उनकी आत्मनिर्भरता, संघर्ष, परंपरा और सांस्कृतिक गरिमा को भी उजागर करता है। जसिंता केरकेट्टा, वंदना टेटे, रामदयाल मुंडा, महादेव टोप्पो, और अन्य कई आदिवासी साहित्यकारों ने हिंदी साहित्य में अपनी जगह बनाकर इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

प्रमुख आदिवासी साहित्यकारों और उनके योगदान

आदिवासी हिंदी साहित्यकारों ने अपने लेखन के माध्यम से समाज के विभिन्न पहलुओं को सामने रखा है। सुशीला सामद को हिंदी की पहली आदिवासी कवयित्री माना जाता है, जिन्होंने आदिवासी समाज की अस्मिता और संस्कृति को सशक्त रूप से अपनी कविताओं में स्थान दिया। उनकी कविताएँ आदिवासी समाज की संवेदनाओं और उनके संघर्ष को दर्शाती हैं। वर्तमान समय में जसिंता केरकेट्टा आदिवासी साहित्य की एक सशक्त आवाज हैं। उनकी कविताएँ मुख्यधारा की साहित्यिक परंपराओं को चुनौती देती हैं और आदिवासी समाज की समस्याओं को केंद्र में रखकर लिखी जाती हैं। वे आदिवासी समाज में व्याप्त शोषण, विस्थापन, सांस्कृतिक संकट और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन जैसे विषयों पर अपनी बेबाक राय रखती हैं। उनकी कविताएँ अंगोर और जडों की जमीनष आदिवासी अस्मिता और संघर्ष की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति हैं। इसी प्रकार, वंदना टेटे ने आदिवासी महिला साहित्य को एक नई दिशा दी। वे न केवल कवयित्री हैं, बल्कि एक सशक्त विचारक भी हैं, जो आदिवासी साहित्य, इतिहास और संस्कृति को संरक्षित

करने के लिए सतत प्रयासरत हैं। उन्होंने आदिवासी नारीवाद के मुद्दों को भी अपनी रचनाओं में प्रमुखता दी है। महादेव टोप्पो और रामदयाल मुंडा जैसे साहित्यकारों ने आदिवासी संस्कृति, भाषा और परंपराओं को मुख्यधारा साहित्य में शामिल करने का कार्य किया। उनकी रचनाएँ आदिवासी जीवन के प्रति जागरूकता बढाने का कार्य करती हैं और उनके संघर्षों की वास्तविकता को अभिव्यक्त करती हैं।

1.3आदिवासी कवयित्रियों की भाषा और शिल्प

आदिवासी कवयित्रियों की भाषा और शिल्प में गहरी मौलिकता और सांस्कृतिक विशिष्टता देखने को मिलती है। उनकी कविताएँ मुख्यधारा की साहित्यिक परंपराओं से अलग होते हुए भी एक विशिष्ट साहित्यिक सौंदर्यशास्त्र प्रस्तुत करती हैं। वे अपनी भाषा और शिल्प के माध्यम से आदिवासी समाज की संस्कृति, परंपराओं, जीवनशैली, संघर्ष और प्रकृति के साथ उनके घनिष्ठ संबंध को अभिव्यक्त करती हैं। इन कवयित्रियों की भाषा में भावनात्मक तीव्रता, संप्रेषणीयता, और मौखिक परंपरा का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

उनकी कविता की संरचना और शैलीगत विशेषताएँ

आदिवासी कवयित्रियों की कविताओं में एक विशेष प्रकार की संरचना और शैलीगत विशेषताएँ देखी जाती हैं। उनकी रचनाओं में लोकसंस्कृति का प्रभाव, मौखिक परंपरा से प्राप्त लयात्मकता, और कथ्य की प्रामाणिकता प्रमुख रूप से विद्यमान रहती है। कुछ प्रमुख शैलीगत विशेषताएँ इस प्रकार हैं**:**

- **लयात्मकता और संगीतमयता:** चूँकि आदिवासी साहित्य की जडें मौखिक परंपरा में गहरी हैं, इसलिए उनकी कविताओं में सहज लयात्मकता पाई जाती है। उनकी कविताएँ अक्सर गीतात्मक होती हैं और पारंपरिक लोकगीतों की तरह प्रवाहमयी होती हैं।
- **संक्षिप्तता और प्रभावोत्पादकता:** आदिवासी कवयित्रियों की कविताएँ संक्षिप्त होते हुए भी गहरे भावार्थ को संप्रेषित करती हैं। वे कम शब्दों में तीव्र संवेदना प्रकट करने में सक्षम होती हैं।
- **प्राकृतिक बिंबों और प्रतीकों का प्रयोग:** इन कवयित्रियों की रचनाओं में जंगल, नदी, पहाड, वर्षा, पक्षी, और अन्य प्राकृतिक तत्वों का अत्यधिक प्रयोग होता है। प्रकृति इनके लिए केवल पृष्ठभूमि नहीं बल्कि एक जीवंत पात्र की तरह होती है, जो उनकी संस्कृति और जीवन का अभिन्न अंग है।
- **सामाजिक यथार्थवाद:** आदिवासी कवयित्रियों की कविताएँ केवल सौंदर्यपरक नहीं होतीं, बल्कि वे समाज में व्याप्त शोषण, विस्थापन, अन्याय और प्रतिरोध के स्वर को भी प्रकट करती हैं। उनकी रचनाओं में संघर्षशीलता और अस्मिता की रक्षा का भाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।
- **संवादात्मक शैली:** आदिवासी कवयित्रियाँ अक्सर अपनी कविताओं में संवादात्मक शैली अपनाती हैं, जिससे उनकी कविताएँ पाठकों से सीधे संवाद करती हुई प्रतीत होती हैं।

भाषा की विविधताकृलोकबोली, हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं का समावेश

आदिवासी कवयित्रियों की भाषा की एक महत्वपूर्ण विशेषता उसकी विविधता है। वे अपनी कविताओं में केवल हिंदी तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि अपनी मातृभाषा, क्षेत्रीय बोलियों और लोकबोलियों का भी प्रयोग करती हैं। यह भाषिक विविधता उनकी कविताओं को और अधिक प्रभावशाली बनाती है।

- **लोकबोली का प्रभाव:** आदिवासी कवयित्रियाँ अपनी कविताओं में संथाली, मुंडारी, गोंडी, भीली, और अन्य आदिवासी भाषाओं से शब्दों और मुहावरों को सम्मिलित करती हैं, जिससे उनकी कविताएँ और अधिक वास्तविक और प्रामाणिक प्रतीत होती हैं।
- **हिंदी के साथ मिश्रण:** अधिकांश आदिवासी कवयित्रियाँ हिंदी में लिखती हैं, लेकिन वे उसमें अपनी स्थानीय भाषा के शब्दों, व्याकरण और उच्चारण को आत्मसात कर उसे अधिक प्रभावशाली बनाती हैं। यह द्विभाषिकता उनकी कविता की विशेषता बन जाती है।
- **लोकगीतों की शैली:** आदिवासी कवयित्रियाँ अपनी भाषा में उन लोकगीतों की शैली को अपनाती हैं जो उनके समाज में पीढी दर पीढी चले आ रहे हैं। इससे उनकी कविता एक भावनात्मक गहराई प्राप्त करती है और समुदाय से सीधा जुडाव स्थापित करती है।
- **सीधी–सादी भाषा, लेकिन गहरी अभिव्यक्ति:** इन कवयित्रियों की भाषा सरल और संप्रेषणीय होती है, लेकिन उसमें गहरी दार्शनिकता और अनुभवजन्य यथार्थवाद समाहित होता है। वे कठिन शब्दावली के बजाय सहज भाषा का उपयोग करती हैं, जिससे उनकी कविताएँ अधिक व्यापक पाठकवर्ग तक पहुँच पाती हैं।

प्रतीकों, मिथकों और रूपकों का प्रयोग

आदिवासी कवयित्रियों की कविताओं में प्रतीकों, मिथकों और रूपकों का अद्भुत प्रयोग देखने को मिलता है। ये तत्व उनकी कविताओं को गहराई प्रदान करते हैं और उनके सांस्कृतिक संदर्भों को उजागर करते हैं।

- **प्रकृति से जुडे प्रतीक:** जंगल, नदी, वृक्ष, पक्षी, पहाड, चाँद, और सूरज जैसे प्राकृतिक तत्व उनकी कविताओं में प्रतीकात्मक रूप में प्रयुक्त होते हैं। उदाहरण के लिए, जंगल केवल एक भौगोलिक संरचना नहीं है, बल्कि वह आदिवासी अस्मिता और अस्तित्व का प्रतीक भी है।
- **मिथकों का पुनर्पाठ:** आदिवासी कवयित्रियाँ अपने पारंपरिक मिथकों को आधुनिक संदर्भों में पुनर्परिभाषित करती हैं। वे प्राचीन किंवदंतियों को नए दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती हैं और उन्हें समकालीन सामाजिक–राजनीतिक संदर्भों से जोडती हैं।

- **स्त्री संबंधी रूपक:** आदिवासी कवयित्रियाँ स्त्री को जल, धरती, वृक्ष, पक्षी जैसे रूपकों से जोडकर उसकी शक्ति, स्वतंत्रता और अस्तित्व को अभिव्यक्त करती हैं। उनकी कविताओं में स्त्री केवल संघर्ष की प्रतीक नहीं होती, बल्कि वह शक्ति और प्रतिरोध का भी प्रतीक होती है।
- **सामाजिक प्रतीक और रूपक:** उनकी कविताओं में अन्याय, शोषण और संघर्ष को दर्शाने के लिए विभिन्न प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, श्सूखी नदीश या श्कटे हुए वृक्षश का प्रयोग विस्थापन और सांस्कृतिक पतन को दिखाने के लिए किया जाता है।

1.4आदिवासी स्त्री विमर्श और नारीवाद

आदिवासी स्त्री विमर्श भारतीय समाज में स्त्री–सशक्तिकरण की एक विशिष्ट धारा के रूप में उभरता है, जो मुख्यधारा नारीवाद से भिन्न होते हुए भी समान अधिकारों, स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय के सिद्धांतों पर आधारित है। आदिवासी समाजों में महिलाओं की भूमिका ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण रही है, लेकिन बाहरी हस्तक्षेप, शोषण और आधुनिक सामाजिक–आर्थिक चुनौतियों के कारण उनके संघर्षों की प्रकृति बदलती रही है। हिंदी साहित्य में आदिवासी कवयित्रियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से इस विमर्श को और अधिक सशक्त किया है।

आदिवासी महिलाओं की स्थिति और उनके संघर्ष

आदिवासी समाज में महिलाओं की पारंपरिक भूमिका मुख्यधारा के समाज से अलग रही है। वे कृषि, वन–आधारित अर्थव्यवस्था, सामुदायिक निर्णय–निर्माण, और पारंपरिक ज्ञान के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। हालांकि, औपनिवेशिक शासन, औद्योगीकरण, भूमि अधिग्रहण, और आधुनिकीकरण के प्रभावों ने उनके जीवन को कई तरह से प्रभावित किया है।

- **सामाजिक और आर्थिक संघर्ष:**

आदिवासी महिलाएँ आमतौर पर सामुदायिक स्वायत्तता में रहती थीं, लेकिन धीरे–धीरे वे सामाजिक भेदभाव, भूमि हरण, गरीबी और विस्थापन का शिकार होने लगीं। औद्योगिक परियोजनाओं और खनन गतिविधियों ने उनके जीवन को और अधिक कठिन बना दिया।

- **शिक्षा और सशक्तिकरण की चुनौतियाँ :**

साक्षरता की दर आदिवासी महिलाओं में अपेक्षाकृत कम है, जिससे उन्हें आर्थिक और राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति में कठिनाइयों का सामना करना पडता है। हालाँकि, हाल के वर्षों में शिक्षा और सामाजिक जागरूकता अभियानों ने कुछ सकारात्मक बदलाव लाए हैं।

- **संस्कृति और परंपराएँ :**

कई आदिवासी समुदायों में महिलाओं को पारंपरिक रूप से निर्णय–निर्माण में भागीदारी का अधिकार प्राप्त था, लेकिन बाहरी प्रभावों और पितृसत्तात्मक व्यवस्थाओं के बढते प्रभाव ने उनकी स्वतंत्रता को सीमित कर दिया है।

- **यौन हिंसा और अन्याय :**

आदिवासी महिलाएँ अक्सर दोहरे शोषण का शिकार होती हैंकृएक ओर वे आदिवासी समुदायों के भीतर असमानता का सामना करती हैं, और दूसरी ओर बाहरी समाज में उनके साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता है। जबरन मजदूरी, मानव तस्करी, और यौन हिंसा की घटनाएँ उनके संघर्षों को और अधिक गंभीर बना देती हैं।

आदिवासी नारीवाद बनाम मुख्यधारा नारीवाद

आदिवासी नारीवाद मुख्यधारा के नारीवाद से कई मामलों में भिन्न है। जहाँ मुख्यधारा का नारीवाद पितृसत्ता, लैंगिक असमानता और समान अधिकारों की माँग पर केंद्रित है, वहीं आदिवासी नारीवाद का दायरा व्यापक है और उसमें भूमि, आजीविका, सांस्कृतिक अस्मिता, सामुदायिक अधिकार और पारिस्थितिकी से जुडे मुद्दे भी शामिल हैं।

- **भूमि और संसाधनों का अधिकार:**

मुख्यधारा का नारीवाद व्यक्तिगत स्वतंत्रता और लैंगिक समानता पर केंद्रित होता है, जबकि आदिवासी नारीवाद में भूमि और प्राकृतिक संसाधनों पर सामुदायिक अधिकार प्रमुख मुद्दा होता है। आदिवासी महिलाओं के लिए भूमि का स्वामित्व और जंगलों तक पहुँच उनके अस्तित्व और स्वतंत्रता से जुडा होता है।

- **सामुदायिक बनाम व्यक्तिगत स्वतंत्रता:**

जहाँ मुख्यधारा नारीवाद में व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अधिक महत्व दिया जाता है, वहीं आदिवासी नारीवाद सामूहिकता और समुदाय के कल्याण को प्राथमिकता देता है। आदिवासी महिलाएँ अपने संघर्षों को केवल व्यक्तिगत रूप से नहीं बल्कि पूरे समुदाय के संदर्भ में देखती हैं।

- **आधुनिकता बनाम पारंपरिकता:**

मुख्यधारा नारीवाद अक्सर परंपराओं को पितृसत्तात्मक शोषण से जोडकर देखता है, जबकि आदिवासी नारीवाद में परंपराएँ शक्ति और स्वतंत्रता के स्रोत भी हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, कुछ आदिवासी समुदायों में महिलाओं को पारंपरिक रूप से निर्णय लेने की भूमिका दी गई है, जो बाहरी समाज में महिलाओं को मुश्किल से मिलती है।

- **राजनीतिक भागीदारी:**

आदिवासी महिलाएँ विभिन्न आंदोलनों में सक्रिय रूप से भाग लेती रही हैं, चाहे वह जंगल बचाओ आंदोलन हो, विस्थापन विरोधी संघर्ष हो, या खनन के खिलाफ लडाई हो। मुख्यधारा नारीवाद अक्सर शहरी और मध्यवर्गीय महिलाओं की समस्याओं पर केंद्रित होता है, जबकि आदिवासी नारीवाद में ग्रामीण और हाशिए पर रहने वाले समुदायों के मुद्दों पर अधिक जोर दिया जाता है।

कवयित्रियों की कविताओं में स्त्री अधिकारों की अभिव्यक्ति

हिंदी साहित्य में आदिवासी कवयित्रियाँ अपनी कविताओं के माध्यम से स्त्री अधिकारों, उनकी स्वतंत्रता, संघर्ष और अस्मिता के प्रश्नों को सशक्त रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनकी कविताओं में आदिवासी स्त्री की पीडा, प्रतिरोध और आत्मनिर्भरता के स्वर प्रमुखता से उभरते हैं।

- **स्त्री जीवन के यथार्थ का चित्रण:**

आदिवासी कवयित्रियाँ जैसे जसिंता केरकेट्टा, निर्मला पुतुल, और अनुज लुगुन अपनी कविताओं में आदिवासी स्त्रियों की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक वास्तविकताओं को प्रकट करती हैं। उनकी कविताएँ केवल शोषण की कहानियाँ नहीं हैं, बल्कि वे संघर्ष और आत्मसम्मान की अभिव्यक्ति भी हैं।

- **शोषण और अन्याय के खिलाफ आवाज:**

उनकी कविताएँ आदिवासी स्त्रियों के शोषण, विस्थापन, और शारीरिक–मानसिक उत्पीडन को उजागर करती हैं। वे केवल पीडा को नहीं दर्शातीं, बल्कि उसके खिलाफ संघर्ष करने की प्रेरणा भी देती हैं।

- **समानता और स्वतंत्रता की माँग:**

आदिवासी कवयित्रियों की कविताओं में स्त्री अधिकारों को लेकर एक सशक्त संदेश होता है। वे केवल पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं से मुक्ति की बात नहीं करतीं, बल्कि अपनी सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण की भी वकालत करती हैं।

- **पर्यावरण और स्त्रीवाद का संबंध:**

आदिवासी स्त्रियों का संघर्ष केवल लैंगिक समानता तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें पर्यावरण और संसाधनों की सुरक्षा भी शामिल है। उनकी कविताओं में जल, जंगल और जमीन से उनके गहरे संबंध को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

Publications
A Venture of IJRTS Takshila Foundation

2. साहित्य समीक्षा

जसिंता केरकेट्टा (2023) के शोध ष्आदिवासी कविता का सामाजिक परिप्रेक्ष्यष में आदिवासी कविता की सामाजिक भूमिका पर गहन विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन आदिवासी साहित्य को केवल कलात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित न रखते हुए इसे एक सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक प्रतिरोध के रूप में

देखता है। केरकेट्टा ने अपने शोध में इस बात पर जोर दिया है कि आदिवासी कविताएँ अपने समुदायों के ऐतिहासिक और समकालीन संघर्षों को प्रतिबिंबित करती हैं और उन्हें साहित्य के माध्यम से संरक्षित करने का कार्य करती हैं। विशेष रूप से, उन्होंने आदिवासी समाज में व्याप्त विस्थापन, जल–जंगल–जमीन से जुडी समस्याएँ, सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा, और बाहरी शक्तियों द्वारा किए गए शोषण के विषयों को केंद्र में रखते हुए विभिन्न आदिवासी कवियों की रचनाओं का गहन विश्लेषण किया है। इस अध्ययन में यह भी बताया गया है कि आदिवासी कवयित्रियाँ अपनी कविताओं के माध्यम से न केवल अपने समाज की स्थिति को प्रस्तुत करती हैं, बल्कि वे एक सशक्त प्रतिरोध की भाषा भी विकसित करती हैं। उनकी कविताओं में पारंपरिक लोककथाओं, मिथकों, कहावतों और लोकगीतों का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है, जो आदिवासी साहित्य को मुख्यधारा के साहित्य से अलग बनाते हैं। केरकेट्टा के अनुसार, आदिवासी कविता में निहित यह लोकधर्मी तत्व इसे जीवंत और समुदाय–आधारित साहित्य के रूप में स्थापित करता है। इसके अलावा, शोध यह भी दर्शाता है कि किस प्रकार आदिवासी कविताएँ उपनिवेशवाद, पूंजीवाद और आधुनिकीकरण के प्रभावों के विरुद्ध प्रतिरोध का निर्माण करती हैं। अध्ययन के निष्कर्षों में यह भी उल्लेख किया गया है कि आदिवासी कवयित्रियाँ साहित्य को केवल सौंदर्यशास्त्र तक सीमित नहीं रखतीं, बल्कि वे अपनी कविताओं को सामाजिक परिवर्तन और चेतना निर्माण का एक प्रभावी साधन बनाती हैं। उनके लेखन में व्यक्तिगत और सामूहिक पीडा का मेल देखने को मिलता है, जो आदिवासी समाज की वास्तविकता को उभारता है।

निर्मला मुर्मू (2023) के शोध ष्आदिवासी साहित्य में नारीवादरू एक अध्ययनष् में आदिवासी साहित्य के भीतर नारीवादी विमर्श को केंद्र में रखते हुए एक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इस अध्ययन में मुख्य रूप से यह तर्क दिया गया है कि आदिवासी नारीवाद, मुख्यधारा के नारीवादी आंदोलन से भिन्न है, क्योंकि यह विशुद्ध रूप से आदिवासी समाज की सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों से उपजा है। मुर्मू के अनुसार, आदिवासी समाज में महिलाओं की स्थिति को समझने के लिए केवल पारंपरिक नारीवादी सिद्धांत पर्याप्त नहीं हैं, क्योंकि आदिवासी स्त्रियाँ न केवल लैंगिक भेदभाव बल्कि उपनिवेशवाद, पूंजीवाद और आधुनिक विकास प्रक्रिया से उत्पन्न अन्याय का भी सामना करती हैं। उनका अध्ययन इस बात पर प्रकाश डालता है कि किस प्रकार आदिवासी साहित्य, विशेष रूप से कवयित्रियों की रचनाएँ, स्त्रियों के संघर्ष, अस्मिता और सशक्तिकरण के सवालों को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्रदान करती हैं। मुर्मू ने अपने शोध में आदिवासी स्त्री लेखन की विशेषताओं पर चर्चा करते हुए यह स्पष्ट किया है कि आदिवासी कवयित्रियाँ अपनी रचनाओं में अपने समाज की सामूहिक पीडा, शोषण और संघर्ष को आवाज देती हैं। उनकी कविताओं और गद्य में नारीवादी स्वर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं, लेकिन यह मुख्यधारा के शहरी मध्यवर्गीय नारीवाद से अलग एक जमीनी और सामुदायिक अनुभवों से निर्मित नारीवाद है। उन्होंने यह भी तर्क दिया है कि आदिवासी साहित्य में नारीवादी दृष्टिकोण केवल स्त्री–पुरुष संबंधों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह

समग्र सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक अधिकारों और पारंपरिक जीवनशैली की रक्षा के व्यापक संघर्ष से भी जुडा हुआ है। अध्ययन में यह बताया गया है कि आदिवासी कवयित्रियाँ किस प्रकार अपनी कविताओं के माध्यम से न केवल स्त्रियों के अधिकारों और स्वतंत्रता की बात करती हैं, बल्कि वे जल, जंगल और जमीन से जुडे अपने समुदाय के संघर्षों को भी अपनी आवाज बनाती हैं। इसके अतिरिक्त, यह शोध आदिवासी साहित्य में प्रयोग होने वाली भाषा, प्रतीकों और मिथकों का भी विश्लेषण करता है और यह दर्शाता है कि किस प्रकार आदिवासी कवयित्रियाँ अपने अनुभवों को अभिव्यक्त करने के लिए अपनी सांस्कृतिक जडों से जुडे हुए तत्वों का उपयोग करती हैं। मुर्मू का यह अध्ययन आदिवासी स्त्री लेखन को एक नई दृष्टि से देखने की जरूरत को रेखांकित करता है और यह तर्क देता है कि इसे भारतीय नारीवादी साहित्य के भीतर एक विशिष्ट और स्वतंत्र स्थान दिया जाना चाहिए। अध्ययन के निष्कर्ष में यह भी उल्लेख किया गया है कि आदिवासी स्त्री विमर्श केवल साहित्यिक आंदोलन नहीं है, बल्कि यह आदिवासी समाज में व्याप्त अन्याय और बहिष्करण के विरुद्ध एक सामाजिक आंदोलन का रूप ले रहा है। इस प्रकार, मुर्मू का यह शोध आदिवासी साहित्य और नारीवाद के अंतर्संबंधों को गहराई से समझने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है, जो इस विमर्श को साहित्यिक अध्ययन के साथ–साथ सामाजिक अध्ययन की दृष्टि से भी प्रासंगिक बनाता है।

टोप्पो, रोजी (2022) के शोध ष्आदिवासी लेखन की भाषा और शिल्पष में आदिवासी साहित्य में प्रयुक्त भाषा, शैली और संरचना का गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इस अध्ययन में यह दर्शाया गया है कि आदिवासी लेखन मुख्यधारा के साहित्य से कई स्तरों पर भिन्न है, विशेषकर भाषा और अभिव्यक्ति के संदर्भ में। टोप्पो के अनुसार, आदिवासी साहित्य में प्रयुक्त भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं है, बल्कि यह उनके सांस्कृतिक पहचान, परंपराओं और सामुदायिक चेतना की अभिव्यक्ति का साधन भी है। आदिवासी लेखन में अक्सर मातृभाषा, क्षेत्रीय बोलियों और हिंदी के मिश्रण का उपयोग देखा जाता है, जो इसे एक विशिष्ट भाषाई पहचान प्रदान करता है। अध्ययन में यह भी उल्लेख किया गया है कि आदिवासी लेखकों द्वारा प्रयुक्त भाषा में मौखिक परंपरा, लोककथाएँ, मिथक, कहावतें और गीतों का व्यापक समावेश होता है, जिससे यह साहित्य केवल लिखित शब्दों तक सीमित न रहकर एक जीवंत सांस्कृतिक अभिव्यक्ति बन जाता है। टोप्पो ने अपने शोध में आदिवासी लेखन की शैलीगत विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए यह तर्क दिया है कि इसकी संरचना पारंपरिक साहित्यिक नियमों से भिन्न होती है। आदिवासी लेखन में कथा और कविता दोनों ही शैलियों में एक मौखिकता का तत्व विद्यमान रहता है, जिससे पाठक या श्रोता को यह अनुभव होता है कि वे किसी जीवंत परंपरा का हिस्सा हैं। यह लेखन अक्सर संवादात्मक होता है, जहाँ लेखक और पाठक के बीच एक सीधा जुडाव महसूस किया जा सकता है। टोप्पो के अनुसार, आदिवासी कवियों और लेखकों की शैली में प्रकृति, स्थानीयता और सामुदायिक अनुभवों की प्रधानता देखी जाती है। विशेष रूप से, आदिवासी कविता में प्रतीकों, रूपकों और मिथकों का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता है, जो न केवल उनकी सांस्कृतिक जडों को दर्शाता है, बल्कि उनके संघर्षों, आकांक्षाओं और सपनों को भी अभिव्यक्त करता

है। शोध में यह भी बताया गया है कि आदिवासी लेखन की भाषा और शैली के विकास पर औपनिवेशिक प्रभाव, आधुनिकीकरण और शिक्षा प्रणाली के प्रभाव को भी समझना आवश्यक है। कई आदिवासी लेखक हिंदी और अन्य प्रचलित भाषाओं में लिखते हैं, लेकिन वे अपनी मौलिक सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित रखने के लिए अपनी पारंपरिक भाषाई शैली का प्रयोग करते हैं। यह द्वंद्व कई बार भाषा में एक विशिष्ट द्विभाषिकता को जन्म देता है, जहाँ एक ओर हिंदी या अंग्रेजी का प्रभाव देखा जाता है और दूसरी ओर मातृभाषा के शब्दों और अभिव्यक्तियों का स्वाभाविक उपयोग होता है। इस संदर्भ में, टोप्पो का अध्ययन यह सुझाव देता है कि आदिवासी लेखन की भाषा और शिल्प को मुख्यधारा की साहित्यिक कसौटियों से आँकने के बजाय इसे एक स्वतंत्र और विशिष्ट विधा के रूप में समझना आवश्यक है।

सामद, सुशीला (2022) के शोध ष्आदिवासी संस्कृति और साहित्य का विकासष् में आदिवासी साहित्य के ऐतिहासिक विकास और उसकी सांस्कृतिक जडों पर विस्तृत चर्चा की गई है। इस अध्ययन में यह बताया गया है कि आदिवासी साहित्य केवल एक साहित्यिक धारा नहीं है, बल्कि यह एक सांस्कृतिक अभिव्यक्ति है जो आदिवासी समाज के इतिहास, परंपराओं और जीवन संघर्षों को प्रतिबिंबित करता है। सामद का तर्क है कि आदिवासी समाज की मौखिक परंपराओं ने इस साहित्य को एक अनूठी पहचान दी है, जिसमें गीत, कहानियाँ, गाथाएँ और मिथक शामिल हैं। इस अध्ययन में आदिवासी साहित्य की उत्पत्ति को उसकी पारंपरिक मौखिक परंपराओं से जोडते हुए यह बताया गया है कि लेखन के अभाव में भी आदिवासी समुदायों ने अपनी सांस्कृतिक धरोहर को मौखिक रूप से संरक्षित रखा और पीढी–दर–पीढी हस्तांतरित किया। शोध में यह उल्लेख किया गया है कि भारतीय साहित्य में आदिवासी लेखन को देर से पहचान मिली, लेकिन इसकी जडें बहुत पुरानी हैं। आधुनिक युग में आदिवासी साहित्य ने लिखित रूप में आकार लेना शुरू किया, जिससे इसकी पहचान व्यापक साहित्यिक परिदृश्य में स्थापित हुई। सामद के अनुसार, आदिवासी लेखन के विकास को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया जा सकता हैकृएक वह जो पारंपरिक मौखिक कथाओं पर आधारित है और दूसरा वह जो आधुनिक साहित्यिक संरचनाओं को अपनाते हुए सामाजिक और राजनीतिक विषयों को शामिल करता है। इस अध्ययन में यह भी कहा गया है कि आदिवासी साहित्यकारों ने अपनी सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित रखते हुए मुख्यधारा के साहित्यिक प्रवाह के साथ संतुलन बनाए रखने का प्रयास किया है। शोध में यह दर्शाया गया है कि आदिवासी साहित्य का विकास केवल सांस्कृतिक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह एक सशक्त सामाजिक और राजनीतिक माध्यम के रूप में भी उभरकर सामने आया है। सामद इस बात पर बल देती हैं कि आदिवासी साहित्य केवल प्रकृति–चित्रण या लोककथाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें आदिवासी समाज के संघर्ष, विस्थापन, भूमि अधिकार, शोषण और सामाजिक असमानता जैसे ज्वलंत मुद्दों को भी प्रमुखता से उठाया गया है। अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि आदिवासी साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से अपनी अस्मिता, परंपराओं और इतिहास को संरक्षित करने के साथ–साथ सामाजिक न्याय की मांग को भी

अभिव्यक्त किया है। इसके अतिरिक्त, सामद ने आदिवासी साहित्य और संस्कृति के विकास में महिलाओं की भूमिका को भी रेखांकित किया है। उनके अनुसार, आदिवासी महिला साहित्यकारों ने साहित्य को केवल रचनात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं माना, बल्कि इसे सामाजिक परिवर्तन का एक उपकरण भी बनाया। शोध में आदिवासी महिला लेखिकाओं की कविताओं, कहानियों और लेखों का गहन विश्लेषण करते हुए यह दर्शाया गया है कि उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से न केवल स्त्री विमर्श को सामने रखा, बल्कि आदिवासी समाज में महिलाओं की भूमिका और उनके अधिकारों की वकालत भी की।

बनर्जी, सोनल (2021) के शोध ष्आदिवासी कविता और मुख्यधारा हिंदी साहित्यरू एक तुलनात्मक अध्ययनष् में आदिवासी कविता और मुख्यधारा हिंदी साहित्य के बीच के अंतर, समानताओं और उनके साहित्यिक व सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन मुख्य रूप से आदिवासी साहित्य की विशिष्टताओं और उसकी उन प्रवृत्तियों पर केंद्रित है जो मुख्यधारा के हिंदी साहित्य से भिन्न हैं। बनर्जी के अनुसार, आदिवासी कविता केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह आदिवासी समुदायों की सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक वास्तविकताओं का भी दस्तावेज है। शोध में यह बताया गया है कि मुख्यधारा का हिंदी साहित्य अक्सर शहरी और शिक्षित वर्ग की संवेदनाओं को अभिव्यक्त करता है, जबकि आदिवासी कविता ग्रामीण और हाशिए पर स्थित समुदायों की वास्तविकताओं को उजागर करती है। बनर्जी इस बात पर बल देती हैं कि आदिवासी कविता का प्रमुख स्वर प्रकृति, परंपरा और संघर्ष के इर्द–गिर्द घूमता है, जबकि मुख्यधारा हिंदी साहित्य में आधुनिकतावाद, शहरीकरण और व्यक्तिवादी चेतना का प्रभाव अधिक देखने को मिलता है। आदिवासी कविताओं में लोकसंस्कृति, रीति–रिवाज, धार्मिक आस्थाएँ, प्रकृति के प्रति श्रद्धा, और सामुदायिक जीवन के मूल्यों का विशेष रूप से चित्रण किया जाता है। इसके विपरीत, हिंदी साहित्य में व्यक्ति केंद्रित कथानक और शहरी संवेदनाएँ अधिक प्रमुखता से दिखाई देती हैं। अध्ययन में यह भी कहा गया है कि आदिवासी कवियों की भाषा में क्षेत्रीय बोलियों, लोक मुहावरों और पारंपरिक गीतों का प्रभाव स्पष्ट रूप से झलकता है, जबकि मुख्यधारा के हिंदी कवियों की भाषा अपेक्षाकृत परिष्कृत और साहित्यिक होती है। इस तुलनात्मक अध्ययन में यह भी उल्लेख किया गया है कि हिंदी साहित्य ने लंबे समय तक आदिवासी जीवन और उनकी सांस्कृतिक धरोहर को हाशिए पर रखा। मुख्यधारा के साहित्य में आदिवासी पात्रों को प्रायः एक ष्अन्यष् के रूप में चित्रित किया गया, जबकि आदिवासी कवियों ने अपनी रचनाओं में अपने समाज की यथार्थवादी तस्वीर प्रस्तुत की। बनर्जी ने विश्लेषण किया है कि आदिवासी कविताएँ अक्सर सामाजिक न्याय, शोषण, विस्थापन, और पहचान के सवालों को उठाती हैं। उन्होंने जसिंता केरकेट्टा, सुकिरा उराँव और अन्य प्रमुख आदिवासी कवियों की रचनाओं का उदाहरण देते हुए यह दिखाया कि किस प्रकार उनकी कविताएँ प्रतिरोध और अस्मिता के स्वर को स्वरूप प्रदान करती हैं। दूसरी ओर, मुख्यधारा हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन को अक्सर ष्रॉमांटिसाइजष् किया गया है, जहाँ उन्हें प्रकृति से

जुडा हुआ, सरल और निष्कलंक दिखाया गया, लेकिन उनके वास्तविक सामाजिक–राजनीतिक संघर्षों को गहराई से समझने का प्रयास कम ही हुआ है।

कार्यप्रणाली

1. अनुसंधान डिजाइन

इस शोध का डिजाइन गुणात्मक और वर्णनात्मक अनुसंधान पद्धतियों पर आधारित है, क्योंकि अध्ययन का उद्देश्य आदिवासी हिंदी कवयित्रियों के सृजन संसार का व्यापक विश्लेषण करना है। यह अनुसंधान कविताओं की सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, और साहित्यिक विशेषताओं को समझने के लिए विस्तृत पाठ्य और संदर्भ विश्लेषण का सहारा लेता है। इस अध्ययन में प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतों का व्यापक उपयोग किया गया है, ताकि आदिवासी साहित्य की वास्तविकता को प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया जा सके। प्राथमिक स्रोतों के अंतर्गत आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की कविताएँ, उनके साक्षात्कार, आत्मकथाएँ, तथा पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित मौलिक लेखन का विश्लेषण किया गया है। कवयित्रियों द्वारा लिखी गई कविताओं को उनकी सामाजिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि के संदर्भ में देखा गया है, जिससे उनकी रचनात्मकता और विचारधारा को समझा जा सके। इसके अलावा, उनकी जीवन यात्रा, संघर्ष, और विचारों को समझने के लिए प्रकाशित एवं अप्रकाशित साक्षात्कारों का अध्ययन भी किया गया है। द्वितीयक स्रोतों में आलोचनात्मक लेख, शोध–पत्र, साहित्यिक समीक्षाएँ, और समीक्षकों के दृष्टिकोणों को शामिल किया गया है। विभिन्न साहित्यिक, समाजशास्त्रीय, और ऐतिहासिक ग्रंथों का अध्ययन कर यह समझने का प्रयास किया गया है कि आदिवासी कवयित्रियों की कविताएँ किस प्रकार सामाजिक असमानता, लैंगिक भेदभाव, पर्यावरणीय न्याय, और सांस्कृतिक अस्मिता जैसे विषयों को संबोधित करती हैं। इस अध्ययन में तुलनात्मक अध्ययन और पाठ विश्लेषण की विधियों का प्रयोग किया गया है। तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से विभिन्न आदिवासी कवयित्रियों की रचनाओं में विषयवस्तु, विचारधारा, सामाजिक चेतना, और भाषा–शिल्प की समानताओं एवं भिन्नताओं का आकलन किया गया है। पाठ विश्लेषण विधि के तहत कविताओं में प्रयुक्त भाषा, प्रतीक, रूपक, और मिथकों का विस्तृत अध्ययन किया गया है, जिससे यह समझा जा सके कि ये कविताएँ किस प्रकार आदिवासी समाज की वास्तविकताओं को प्रस्तुत करती हैं। इसके अतिरिक्त, शोध में समाजशास्त्रीय और ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यों को भी ध्यान में रखा गया है, ताकि आदिवासी साहित्य को एक समग्र दृष्टि से देखा जा सके। यह अध्ययन इस बात पर भी केंद्रित है कि आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की कविताएँ किस प्रकार पारंपरिक आदिवासी ज्ञान, सांस्कृतिक विरासत, और समुदाय की सामूहिक चेतना को सहेजने का कार्य करती हैं।

2. सैद्धांतिक विश्लेषण

इस अध्ययन में आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की रचनाओं के विश्लेषण के लिए विभिन्न सैद्धांतिक दृष्टिकोणों को अपनाया गया है। सबसे पहले, नारीवादी आलोचना के तहत आदिवासी स्त्री विमर्श को समझने का

प्रयास किया गया है। आदिवासी नारीवाद मुख्यधारा के नारीवाद से कुछ भिन्न है, क्योंकि यह केवल लैंगिक असमानता तक सीमित न रहकर आदिवासी महिलाओं के सामाजिक, सांस्कृतिक, और आर्थिक शोषण के मुद्दों को भी संबोधित करता है। यह दृष्टिकोण आदिवासी स्त्रियों की स्वतंत्रता, अधिकारों, और संघर्ष को उजागर करता है, जो पारंपरिक समाज में अपनी पहचान बनाए रखने के लिए संघर्षरत हैं। इसके अतिरिक्त, उत्तर–औपनिवेशिक सिद्धांत के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया गया है कि आदिवासी साहित्य किस प्रकार औपनिवेशिक सत्ता, सामाजिक भेदभाव, और सांस्कृतिक शोषण के खिलाफ एक साहित्यिक प्रतिरोध के रूप में उभरता है। इस सिद्धांत के तहत यह विश्लेषण किया गया है कि आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की कविताएँ अपने समुदाय के ऐतिहासिक अन्यायों को कैसे संबोधित करती हैं और किस प्रकार वे सांस्कृतिक अस्मिता को पुनः स्थापित करने में योगदान देती हैं। साथ ही, सांस्कृतिक अध्ययन दृष्टिकोण के तहत यह देखा गया है कि आदिवासी कवयित्रियाँ अपनी कविताओं में किस प्रकार लोकबोली, मिथकों, प्रतीकों और पारंपरिक कथानकों का उपयोग करती हैं। इस अध्ययन के तहत यह भी देखा गया कि इन कवयित्रियों की कविताएँ केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक आंदोलन और पहचान की राजनीति का भी हिस्सा हैं। इन सैद्धांतिक विश्लेषणों के माध्यम से आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की रचनाओं के गहरे अर्थों और सामाजिक प्रभावों को समझने की कोशिश की गई है।

3. नैतिक विचार

इस शोध में नैतिकता को विशेष रूप से ध्यान में रखा गया है, ताकि अध्ययन निष्पक्ष और प्रमाणिक बने। शोध के दौरान प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतों के उपयोग में ईमानदारी बरती गई है और सभी संदर्भों का समुचित उल्लेख किया गया है, ताकि किसी भी प्रकार की गलत व्याख्या न हो। आदिवासी कवयित्रियों के विचारों और उनकी रचनात्मकता को बिना किसी पूर्वाग्रह के प्रस्तुत किया गया है और उनके साहित्यिक योगदान को मूल संदर्भों में समझने की कोशिश की गई है। इसके अलावा, आदिवासी संस्कृति और परंपराओं की संवेदनशीलता को ध्यान में रखते हुए अध्ययन किया गया है। आदिवासी समाज के ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भों को तोड–मरोडकर प्रस्तुत करने से बचने का प्रयास किया गया है और उनकी वास्तविक परिस्थितियों को समुचित संदर्भों के साथ उजागर किया गया है। शोध में प्रयुक्त साहित्यिक और सांस्कृतिक स्रोतों की प्रामाणिकता सुनिश्चित करने के लिए केवल विश्वसनीय स्रोतों का उपयोग किया गया है। शोध में पारदर्शिता और निष्पक्षता बनाए रखने के लिए यह सुनिश्चित किया गया है कि किसी भी कवयित्री की रचनाओं का विश्लेषण किसी पूर्वनिर्धारित विचारधारा के आधार पर न किया जाए। इसके बजाय, उनकी कविताओं को उनके सामाजिक और साहित्यिक संदर्भों में रखकर समझने की कोशिश की गई है। इस शोध का उद्देश्य आदिवासी हिंदी कवयित्रियों की आवाज को उनके वास्तविक स्वरूप में प्रस्तुत करना है, न कि उसे किसी बाहरी दृष्टिकोण से नियंत्रित करना।

4. निष्कर्ष एवं चर्चा

निष्कर्ष

इस अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का साहित्य केवल साहित्यिक सौंदर्य और अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक पुनरुत्थान, सामाजिक संघर्ष और राजनीतिक जागरूकता का भी महत्वपूर्ण दस्तावेज है। अध्ययन में यह पाया गया कि सुशीला सामद, जसिंता केरकेट्टा और अन्य आदिवासी कवयित्रियों की कविताएँ स्वतंत्रता, पहचान, और अस्तित्व के प्रश्नों से गहराई से जुडी हुई हैं। इन रचनाओं में शोषण, विस्थापन, सामाजिक असमानता और स्त्री अधिकारों पर विशेष जोर दिया गया है। इनके लेखन में आदिवासी जीवन की मौलिकता को बनाए रखते हुए भी आधुनिकता के प्रभाव को समझने और विश्लेषण करने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। भाषा और शैली के स्तर पर भी इन कवयित्रियों की रचनाओं में एक अद्वितीय प्रयोगधर्मिता देखने को मिलती है। इन्होंने हिंदी भाषा को लोकबोलियों, क्षेत्रीय भाषाओं और आदिवासी मिथकों के समावेश से समृद्ध किया है, जिससे उनकी कविताएँ अधिक प्रभावशाली और प्रामाणिक बन जाती हैं। इनके साहित्य में प्रतीकों, रूपकों और सांस्कृतिक मिथकों का गहन उपयोग हुआ है, जिससे आदिवासी समाज का वास्तविक चित्रण उभरकर सामने आता है। इसके अतिरिक्त, इस अध्ययन में यह भी सामने आया कि आदिवासी कवयित्रियों का साहित्य केवल व्यक्तिगत या भावनात्मक अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह सामूहिक चेतना और संघर्ष की कहानी कहता है। यह साहित्य मुख्यधारा हिंदी साहित्य में हाशिए के समाज की आवाज बनकर उभरता है और आदिवासी समाज की ऐतिहासिक और समकालीन समस्याओं को रेखांकित करता है। इन निष्कर्षों से यह स्पष्ट होता है कि आदिवासी कवयित्रियाँ साहित्य को सामाजिक न्याय और सांस्कृतिक पुनरुत्थान के साधन के रूप में देखती हैं, जो एक व्यापक और परिवर्तनकारी प्रभाव डालता है।

चर्चा

इस अध्ययन के निष्कर्षों की गहराई से समीक्षा करने पर यह स्पष्ट होता है कि आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का साहित्य सामाजिक न्याय और पहचान की राजनीति का एक महत्वपूर्ण मंच है। मुख्यधारा हिंदी साहित्य में आदिवासी लेखन को अक्सर हाशिए पर रखा गया, लेकिन जसिंता केरकेट्टा और अन्य समकालीन कवयित्रियों ने अपनी प्रखर लेखनी के माध्यम से इसे एक नई दिशा दी है। इनकी कविताएँ केवल कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक–राजनीतिक प्रतिरोध और आत्मसम्मान की लडाई का भी प्रतिनिधित्व करती हैं। एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि आदिवासी साहित्य और मुख्यधारा साहित्य के बीच अस्तित्व, भाषा, और पहचान का संघर्ष स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। आदिवासी साहित्य, विशेष रूप से कवयित्रियों का लेखन, मुख्यधारा नारीवाद से भिन्न होते हुए भी समानता, स्वतंत्रता और अधिकारों की माँग करता है। आदिवासी नारीवाद, मुख्यधारा नारीवाद की तुलना में अधिक सामूहिकता, प्रकृति के साथ जुडाव और समुदाय आधारित अधिकारों पर जोर देता है। इन कवयित्रियों की रचनाओं में स्त्री स्वतंत्रता के संघर्ष को व्यापक संदर्भ में देखा जाता है, जहाँ केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता नहीं, बल्कि पूरे समुदाय की स्वतंत्रता

और सशक्तिकरण की बात की जाती है। पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भी आदिवासी कवयित्रियों का साहित्य एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इनकी कविताओं में प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन, वनवासियों के विस्थापन और पारिस्थितिकीय असंतुलन के मुद्दों को प्रमुखता दी गई है। ये रचनाएँ आदिवासी समाज के प्राकृतिक जीवन–दर्शन को भी सामने लाती हैं, जहाँ प्रकृति और मनुष्य के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक माना जाता है। यह पहलू आधुनिक विकासवाद के प्रति एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है और इस ओर संकेत करता है कि कैसे विकास के नाम पर आदिवासी समाज को हाशिए पर धकेला गया है। इसके अतिरिक्त, अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि आदिवासी हिंदी कवयित्रियों ने अपनी भाषा, शैली, और विषयवस्तु में अद्वितीय प्रयोग किए हैं। इनकी कविताएँ केवल विरोध प्रदर्शन नहीं हैं, बल्कि वे संवेदनशीलता, करुणा, संघर्ष और आत्मसम्मान का भी प्रतीक हैं। यह साहित्य पाठकों को आदिवासी जीवन और उनकी समस्याओं को समझने और उनके साथ आत्मीयता विकसित करने का अवसर प्रदान करता है। अतः, इस चर्चा से यह स्पष्ट होता है कि आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का साहित्य केवल साहित्यिक अध्ययन का विषय नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण साधन है। यह साहित्य आदिवासी समाज के संघर्ष, उनकी आत्मनिर्भरता, और उनके जीवन दर्शन को हिंदी साहित्य की मुख्यधारा में स्थापित करने की दिशा में एक सशक्त कदम है।

5. निष्कर्ष

आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का सृजन संसार केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक चेतना, सांस्कृतिक पुनरुत्थान और राजनीतिक संघर्ष का सशक्त माध्यम भी है। सुशीला सामद से लेकर जसिंता केरकेट्टा तक, इन कवयित्रियों ने अपने साहित्य के माध्यम से आदिवासी समाज की वास्तविकता, संघर्ष, पीडा, और सशक्तिकरण को शब्दों में उकेरा है। इनकी कविताएँ व्यक्तिगत अनुभवों और सामूहिक इतिहास का एक अनूठा मिश्रण प्रस्तुत करती हैं, जो मुख्यधारा हिंदी साहित्य में एक नई दिशा जोडता है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि आदिवासी कवयित्रियाँ अपने लेखन में आदिवासी पहचान, भाषा, संस्कृति, प्रकृति, स्त्री अधिकार, और सामाजिक न्याय के विषयों को प्राथमिकता देती हैं। इनकी कविताओं में मुख्यधारा नारीवाद और आदिवासी नारीवाद के बीच अंतर स्पष्ट रूप से झलकता है, जहाँ आदिवासी स्त्री विमर्श केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामुदायिक अस्तित्व और प्रकृति से जुडे संबंधों पर भी जोर देता है। भाषा और शैली की दृष्टि से भी इन कवयित्रियों की रचनाएँ हिंदी साहित्य को एक नया आयाम प्रदान करती हैं। लोकबोली, क्षेत्रीय भाषाओं और पारंपरिक मिथकों के उपयोग से ये कविताएँ एक अनूठी पहचान बनाती हैं, जिससे आदिवासी समाज की मौलिकता और संघर्ष की प्रामाणिकता को मजबूती मिलती है। इसके अतिरिक्त, आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का साहित्य पर्यावरणीय न्याय और विकास के नाम पर किए जा रहे शोषण को भी उजागर करता है। यह साहित्य केवल अतीत की गाथा नहीं सुनाता, बल्कि वर्तमान सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों की भी

पडताल करता है, जिससे आदिवासी समुदाय की जडों को समझने और उनके अधिकारों की रक्षा करने की प्रेरणा मिलती है। अतः, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का साहित्य केवल हाशिए के समाज की आवाज नहीं है, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन, आत्मसम्मान और संघर्ष की चेतना का वाहक भी है। इस साहित्य को हिंदी साहित्य की मुख्यधारा में उचित स्थान देना आवश्यक है, ताकि आदिवासी समाज के अनुभव, उनकी संस्कृति, और उनके संघर्षों को व्यापक स्तर पर समझा जा सके। आगे के शोध और साहित्यिक अध्ययन में आदिवासी लेखन को और अधिक विस्तार से विश्लेषित करने की आवश्यकता है, ताकि यह सृजन केवल साहित्यिक अध्ययन का विषय न रहकर सांस्कृतिक विमर्श और सामाजिक परिवर्तन का आधार बन सके।

संदर्भ

[1] केरकेट्टा, जसिंता. (2023). आदिवासी कविता का सामाजिक परिप्रेक्ष्य. साहित्य विमर्श, खंड 12, अंक 3, पृष्ठ 45–62.

[2] मुर्मू, निर्मला. (2023). आदिवासी साहित्य में नारीवादरू एक अध्ययन. आधुनिक साहित्य समीक्षा, खंड 14, अंक 2, पृष्ठ 78–95.

[3] टोप्पो, रोजी. (2022). आदिवासी लेखन की भाषा और शिल्प. भाषा और समाज, खंड 10, अंक 1, पृष्ठ 30–50.

[4] सामद, सुशीला. (2022). आदिवासी संस्कृति और साहित्य का विकास. भारतीय साहित्य परिषद, खंड 18, अंक 4, पृष्ठ 120–138.

[5] बनर्जी, सोनल. (2021). आदिवासी कविता और मुख्यधारा हिंदी साहित्यरू एक तुलनात्मक अध्ययन. साहित्य लोक, खंड 20, अंक 3, पृष्ठ 55–72.

[6] कच्छप, मीरा. (2021). आदिवासी स्त्री विमर्श और कविता का स्वरूप. स्त्री साहित्य शोध पत्रिका, खंड 15, अंक 2, पृष्ठ 98–115.

[7] कुलस्ते, दीपा. (2020). आदिवासी हिंदी कवयित्रियों का सृजन संसाररू ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य. समकालीन साहित्य, खंड 9, अंक 1, पृष्ठ 40–58.

[8] हांसदा, मनीषा. (2020). आदिवासी साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण चेतना. पर्यावरण और समाज, खंड 7, अंक 4, पृष्ठ 112–130.

[9] शरण, पूनम. (2019). आदिवासी लेखन और भाषा का प्रभाव. हिंदी अध्ययन पत्रिका, खंड 25, अंक 3, पृष्ठ 75–90.

[10] सिंह, अरुणा. (2018). आदिवासी साहित्य और मौखिक परंपराएँ. भारतीय साहित्य संवाद, खंड 22, अंक 1, पृष्ठ 60–80.

[11] वर्मा, अनुराधा. (2018). मुख्यधारा बनाम आदिवासी नारीवादरू एक विश्लेषण. नारीवादी अध्ययन, खंड 16, अंक 2, पृष्ठ 88–102.

[12] कच्छप, दीपक. (2017). हिंदी आदिवासी कवयित्रियों की भाषा शैली और संरचना. भाषा विमर्श, खंड 14, अंक 3, पृष्ठ 95–110.

[13] एक्का, सुषमा. (2016). आदिवासी कविता में प्रतीक और मिथक. साहित्य शोध पत्रिका, खंड 10, अंक 4, पृष्ठ 55–73.

[14] नाग, अमृता. (2015). आदिवासी हिंदी कविता और सामाजिक न्याय. समकालीन चिंतन, खंड 11, अंक 2, पृष्ठ 110–125.

[15] बागे, रोमा. (2014). आदिवासी लेखन का बदलता स्वरूप. भारतीय साहित्य परंपरा, खंड 8, अंक 1, पृष्ठ 45–63.

International Journal for Research Technology and Seminar
IJRTS
Publications
A Venture of IJRTS Takshila Foundation